ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-1* February- 2021
Innovation The Research Concept

दिवाकर का आग–पानी, आकाश : अनछुए पहलू का सूक्ष्म अवलोकन

Diwakar's Fire-Water, Sky: Close Observation of Untouched Aspect

Paper Submission: 02/02/2021, Date of Acceptance: 23/02/2021, Date of Publication: 25/02/2021

अजीत कुमार
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
तिलका माँझी भागलपुर विश्वविद्यालय,
भागलपुर, बिहार, भारत

सारांश

हिन्दी–साहित्य की उपन्यास विधा नित नवीन विमर्शों, दर्शनों, वादों व वैचारिकी से प्रेरित रही है। प्रेमचन्द से होते हुए रेणु और रेणु से होते हुए दिवाकर की उपन्यास यात्रा इसका जीवंत उदाहरण है। आजादी के पश्चात् भारतीय समाज की स्थितियों का यथार्थ चित्रण जिस प्रकार रेणु के उपन्यासों में उपलब्ध होता है, उसी यथार्थ के सूक्ष्म स्वरूपों का ग्राम्य धरातल पर सजीव चित्रण रामधारी सिंह 'दिवाकर' के उपन्यासों में उपलब्ध है।

दलित–विमर्श के मामले को दिवाकर के उपन्यास 'आग पानी आकाश' एक नयी व सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान करने में सक्षम उपन्यास है। इस उपन्यास में उपन्यासकार ने विमर्श के अंतःभाग में घुसकर एक नए विमर्शों को जन्म देने की कोशिश की है। 'दलित के द्वारा दलितों का शोषण' इस विषय–वस्तु को उपन्यास का मुख्य विषय बनाकर कथा को बुनते हुए पाठक तक पहुँचाना व पाठक को सहजतापूर्वक अपने ग्राम्य परिवेश में हो रहे गौण अत्याचार से अवगत कराना दिवाकर का मुख्य उद्देश्य है, जो एक साहसिक कार्य है।

The novel genre of Hindi literature has been inspired by new discussions, philosophies, promises and ideology. Diwakar's novel journey through Premchand to Renu and Renu is a living example of this. Just as an accurate depiction of the conditions of Indian society after independence is available in Renu's novels, the lively depiction of the subtle forms of reality on the rural land is available in the novels of Ramdhari Singh 'Diwakar'.

Diwakar's novel 'Aag Pani Akash' is capable of providing a new and powerful expression to the issue of Dalit discourse.

In this novel, the novelist enters the interplay of discourse and tries to give birth to a new discourse. 'Exploitation of Dalits by Dalits' is the main objective of Diwakar, which makes this subject a novel, making it the main theme of the novel and spreading the narrative to the reader and making the reader easily aware of the minor atrocities happening in their rural environment.

मुख्य शब्द : प्रस्तावना, हिन्दी–साहित्य में दलित विमर्श, दलित विमर्श के नए आयाम, निष्कर्षात्मक विवेचन।

Preface, Dalit Discourse in Hindi-Literature, New Dimensions of Dalit Discourse, Exploratory Discourse.

प्रस्तावना

हिन्दी कथा–साहित्य में रामधारी सिंह 'दिवाकर' एक ऐसा नाम है जिनके कथात्मक वैचारिकी की जड़ें जमीन में बड़ी गहरी पैठी हुई है। कथा की जिस जमीन को अपने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की पैनी दृष्टि से हिन्दी के मायनाज कथाकार प्रेमचन्द ने उर्वर बनाया, उसी जमीन पर यथार्थवाद की दृष्टि से फणीश्वरनाथ रेणु ने आँचलिकता की सोंधी खुशबू के साथ हिन्दी कथा–साहित्य को एक नयी प्राणवत्ता प्रदान की। इसी प्रेमचन्द और रेणु की विरासत को सम्हालने व उनकी कथात्मक धारा को बाद के दिनों में तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक गतिविधियों के साथ जोड़कर प्रवहमान बनाने का कार्य रामधारी सिंह 'दिवाकर' के कथा–साहित्य ने किया है।

सन् 1950 के आसपास हिन्दी कथा–साहित्य नित नवीन विमर्शों, आन्दोलनों व वादों–प्रतिवादों से निरंतर प्रभावित होता रहा। इस कारण हिन्दी कथा–साहित्य में नई–नई प्रवृत्तियों व टेकनिक का आविर्भाव होता रहा। कथा–साहित्य के इसी टेकनिक में आंचलिकता भी एक है। हिन्दी कहानी–उपन्यास के संदर्भ में जब भी आंचलिकता की चर्चा करते हैं तो रेणु जी का नाम सबसे पहले लिया जाता है। जबकि इनसे पहले व समकालीनों ने भी आंचलिकता की लीक पर रचनात्मक कार्य किए हैं। उनमें प्रमुख हैं– शिव प्रसाद सिंह, शिवपूजन सहाय, नागार्जुन इत्यादि। इन यशस्वी कथाकार के होने के बावजूद हिन्दी–साहित्य में आंचलिक कथाओं को जिन्होंने सर्वाधिक पाठक दिए व समूचे कथा–साहित्य में आंचलिकता को एक सम्मानित साहित्य के रूप में जनमानस से लेकर विद्वत् मंडली में स्वीकृत करवाया; वो हैं – फणीश्वरनाथ रेणु। रेणु की कथाओं में ग्राम्य–जीवन में व्याप्त अच्छाइयों व बुराइयों का यथावत् हू–ब–हू सम्यक् दर्शन होता है। जितनी कुशलता से इन्होंने प्रेम की सूक्ष्मता व कोमलता को कथाओं में दिखाया है, उसी तरह इन्होंने ग्रामीण जीवन की पारम्परिक समस्या 'जातिगत वैमनस्य, अशिक्षा, अंधविश्वास व गरीबी, भूमि समस्या व जमींदारी, शोषण, राजनीति में जाति का प्रवेश, आजादी के बाद भारतीय राजनीति का विकृत रूप, वर्ग–संघर्ष, वर्ग की राजनीति, धार्मिक पाखण्ड व भ्रष्टाचार, अनैतिक सम्बन्ध, आदर्शवादी विचारों का अंत' इत्यादि जैसे विषय–वस्तु को अपनी कथाओं में बड़ी ही सुंदरता से चित्रित किया है।

कथाकार दिवाकर, रेणु के साहित्य के साथ–साथ उनके सामाजिक– सांस्कृतिक परिवेश के भी सर्वाधिक निकट हैं। भौगोलिक दृष्टि से दिवाकर भी उसी माटी–पानी के साहित्यकार हैं, जिसमें रेणु की वैचारिकता का विकास हुआ है। दिवाकर की कथाओं का धरातल तो रेणु और प्रेमचन्द जैसा ही है, परन्तु उन धरातल पर जिन विमर्शों व विचारों के वृक्ष को ये कथा के माध्यम से पल्लवित–पुष्पित करते हैं, वह निश्चय ही नया है। जिस प्रकार प्रेमचन्द के गाँव से अलग व बदला हुआ स्वरूप रेणु जी के गाँव का है; ठीक उसी प्रकार इन दोनों ही कथाकारों से दिवाकर जी का गाँव व वहाँ की समस्या नितांत अलग है। इन ग्रामीण जीवन की खूबियों–खामियों, राग–द्वेष व हर्ष–विषाद को दिवाकर जी ने बड़ी ही सूक्ष्मता से देखा–परखा है।

दिवाकर जी के उपन्यास अपने समकालीन समस्याओं को चित्रित करने में पूर्णरूपेण सफल हुए हैं। आजादी के पश्चात् भारतीय संस्कृति में व्याप्त उन विद्रूपताओं का इन्होंने बखूबी चित्रण किया है जिसमें जाति भेद, वर्ग–संघर्ष, समाज में नारी की स्थिति, ब्राह्मणवाद का संघर्ष, पिछड़े–दलितों का संघर्ष, सामंतवाद का ढहता स्वरूप, निचली जातियों में बढ़ती सामंती प्रवृत्ति, निम्नवर्ग में परस्पर शोषण की बढ़ती समस्या तथा लोगों का गाँव से शहर की ओर पलायन की समस्या प्रमुख हैं। ग्रामीण जीवन में व्याप्त सभी जटिलताओं व विषमताओं का जैसे सजीव दर्शन इनके उपन्यासों में हो जाता है।

दिवाकर जी की लेखनी जब कथा–साहित्य में अपनी जमीन तैयार कर रही थी तब हिन्दी कथा–साहित्य में जिन आन्दोलनों व विमर्शों ने अपना चहुँमुखी प्रभाव छोड़ रखा था; वह था – दलित विमर्श व नारी विमर्श। आचार्य शुक्ल का कथन सत्य ही है कि ''जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ–साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।'' तथा ''जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है।''

दिवाकर जी का साहित्य भी जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन का सार्थक परिणाम है। इनके उपन्यासों में जातीय–संघर्ष, दलित–प्रश्न, दलित–वर्ग में उमड़ता ब्राह्मणवाद एवं सामंतवाद को लेकर कई प्रश्न निर्मित होते हैं। उपन्यासकार की लेखनी पाठक को इन सभी विषयों के गहरे यथार्थ तक ले जाती है। साथ ही समाज के यथार्थ एवं राजनीतिक व सामाजिक गतिविधियों में स्वार्थ की रोटी सेंकने के लिए फैलाये जा रहे दलित व गैर–दलित के भेद से संबंधित विषय–वस्तु पर सोचने के लिए इनका उपन्यास मजबूर करता प्रतीत होता है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य रामधारी सिंह दिनकर के उपन्यास आग–पानी आकाश के माध्यम से दलित वर्ग में आई हुई शोषण व सामंती प्रवृत्ति की मानसिक विकृति से साहित्य समाज को अवगत कराना है।

हिन्दी–साहित्य में दलित विमर्श

सामान्यतः दलित विमर्श का साहित्यिक आन्दोलन बाबा भीमराव अम्बेदकर के विचारों की नींव पर खड़ा किया गया माना जाता है। लेकिन बाबा साहब ने कभी इस शब्द का प्रयोग नहीं किया। उन्होंने इस शब्द के विकल्प में ''ब्रोकेन मैन'' शब्द का इस्तेमाल किया। इसी प्रकार जब यह सोच जनमानस तक अपने खोये अधिकारों को हासिल करने के लिए आन्दोलन का रूप लेने के लिए अपनी भूमिका बना रहा था तब महाराष्ट्र में दलित पैंथर की स्थापना ने इस दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। जबकि दलित पैंथर की स्थापना के पीछे केवल बाबा साहब के विचार नहीं थे, इनके साथ मार्क्स के विचार भी मिले हुए थे। यहीं से दलित विमर्श को एक नयी गति मिली। यहाँ का दलित विमर्श आन्दोलन के साथ साहित्य की ओर सर्वप्रथम उन्मुख हुआ। इस दलित साहित्य में दलितों व गैर–दलितों – दोनों ही के द्वारा रचित दलितोद्धारक साहित्य को रखा गया। धीरे–धीरे यह साहित्यिक प्रवृत्ति पूरे भारतीय साहित्य को प्रभावित करने लगी। जल्द ही हिन्दी के विशाल साहित्यिक समूह में भी इसकी अनुगूँज सुनाई पड़ने लगी; परन्तु खड़ी बोली हिन्दी में इस साहित्यिक आन्दोलन का स्वरूप बिल्कुल बदला हुआ प्रतीत होने लगा। सामान्यतः इसमें दलितों द्वारा रचित साहित्य ही दलित साहित्य की परिभाषा बनने लगी। जबकि दलित साहित्य का स्वरूप हिन्दी में पहले भी था; जो दलितोद्धार के विचारों को जनमानस में प्रसारित करने का अभूतपूर्व कार्य करता रहा है।

हिन्दी दलित साहित्य के लेखकों में ओम प्रकाश बाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सूरजपाल चौहान, कौशल्या वैसंत्री, डॉ0 तुलसीराम, डॉ0 टाकभौरे इत्यादि प्रमुख हैं। इन रचनाकारों ने अपनी रचनाओं से सामाजिक रूढ़ि–परम्परावाद को तोड़ नये सामाजिक मूल्यों को स्थापित करने का महत्त्वपूर्ण प्रयास किया है। आज दलित–साहित्य बिल्कुल मुख्यधारा का साहित्य बन चुका है। इसके साथ निश्चित रूप से यह भी कहा जा सकता है कि इस साहित्य ने समाज को पूर्णरूपेण भले ही न बदला हो लेकिन आंशिक रूप से अवश्य ही बदला है। उन ब्राह्मणवादी वर्ण व्यवस्था में आज नए विचारों का आविर्भाव अवश्य ही हुआ है जो सर्वस्वीकार के भाव से प्रेरित है। लेकिन दलित साहित्यकारों के तथाकथित जिस समूह ने दलित पर गैर–दलितों के द्वारा किए गए अन्याय, अत्याचार व भेदभाव को इस साहित्य के विचारों की नींव बनाई, उसके साहित्य की दृष्टि में भले ही विकृति न आयी परन्तु सामाजिक दृष्टि में अवश्य ही बदलाव हुआ है।

जिन आर्थिक रूप से पिछड़े या समाज–शोषित लोगों को दलित के रूप में व्याख्यायित किया गया है उनमें उच्च जाति के लोगों को नहीं रखा गया है; क्योंकि इन दलित साहित्यकारों ने जाति के आधार पर दलित व गैर–दलितों का वर्गीकरण किया है। जबकि उच्च जाति के लोगों में भी गरीबी है, वहाँ भी शोषित जनों की कमी नहीं है। इसके साथ ही जिसे दलित–साहित्य का आश्रय प्राप्त है, वहाँ अपनी जाति में ही शोषक–शोषित विराजमान हैं। तथाकथित निम्न जातियों, पिछड़ा वर्ग, अत्यंत पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति समूहों में भी अमीर और गरीब का वर्गीकरण है। यहाँ आर्थिक रूप से सम्पन्न समूह स्वयंमेव अपनी जाति के पिछड़ों का शोषण करने में लगे हुए हैं, जो अभी तक दलित साहित्यकारों की दृष्टि से ओझल है। इन वैचारिकी को देखकर प्रतीत होता है कि दलित साहित्य के वैचारिक धरातल को विस्तृत करने की आवश्यकता है; अन्यथा दलितों के लिए, दलितों के द्वारा लिखा गया साहित्य, दलित–साहित्य के स्वरूप को संकीर्ण बना रहा है। इस दिशा में गैर–दलित लेखक होते हुए दलित समाज में हो रहे अन्याय व अनाचार पर अपनी सूक्ष्म दृष्टि से समाज का अवलोकन करने वाले लेखकों, उपन्यासकारों में डॉ0 रामधारी सिंह दिवाकर का नाम उल्लेखनीय है।

दलित विमर्श के नये आयाम

दिवाकर जी एक सुलझे हुए उपन्यासकार एवं हमारे समाज के सूक्ष्म विश्लेषक हैं। इनकी रचनाओं में आदि से अंत तक समाज के इन्हीं वैचारिक पतन का दस्तावेज प्राप्त होता है। सामान्यतः इनकी दृष्टि समाज के उन भावात्मक व संवेदनात्मक नसों को दबाती प्रतीत होती है; जहाँ या तो किसी की दृष्टि नहीं गयी हो या वहाँ जाने से कतराती हो। इन्होंने अपने उपन्यास ''आग पानी आकाश'' के लिए ऐसे ही जगहों व अनुभव को उपन्यास की जमीन बनायी है।

मानव की मनःस्थिति के स्वाभाविक विकास की जिस प्रक्रिया का चिन्तन हम करते हैं, वह जन–कल्याण व समाज कल्याण को ध्यान में रखते हुए करते हैं। परन्तु मानव विकास की प्रक्रिया हमारी चिन्तन की अपेक्षाओं पर सही ढंग से उतर पाये, यह कहना बड़ा ही मुश्किल है। मानवीय मनःस्थिति कब, किस ओर मुड़ जायेगी; चाहे वह जनकल्याण के अनुरूप हो या न हो – यह कहना एक कठिन प्रश्न है। ऐसा ही दलित समाज के विकास के साथ भी हुआ है, जो सर्वथा अप्रत्याशित था। बाबा साहब अंबेदकर ने जब अस्पृश्य को स्पृश्य बनाने के लिए जनमानस को अपने विचारों से आन्दोलित किया तो उन्होंने यह सोचा भी नहीं होगा कि जिस ब्राह्मणवादी व सामंतवादी विचारों से दलित समाज को मुक्त करने का आन्दोलन वे चला रहे हैं; एक दिन वही विचार दलित समाज के आर्थिक रूप से सबल होने पर उनमें भी घर कर जायेगा और वही दलित अपने समाज के कमजोर व अपनी जाति के लोगों का शोषण व उत्पीड़न करने लगेगा। लोकतांत्रिक समाज का गलत फायदा लेकर दलित समाज के कुछ लोग बाबा साहब के विचारों व कृत–कर्म को नष्ट करने पर तुले हुए हैं। हॉलाकि इस प्रश्न को दलित साहित्यकारों ने अभी तक देखने–परखने की कोशिश नहीं की है। चूँकि अपने चेहरे के दाग को देखना बड़ा कठिन होता है। यह मानव की निजी विवशता भी होती है। दलित समाज में पनप रहे इसी विकृतियों को आईना दिखाने का काम दिवाकर जी के उपन्यास ''आग पानी आकाश'' ने किया है।

विवेच्य उपन्यास ''आग पानी आकाश'' अपने उद्दिष्ट विषय–वस्तु को यथोचित ढंग से प्रतिपादित करने में सक्षम उपन्यास है। इस उपन्यास में तीन पात्र अति महत्त्वपूर्ण हैं – युगेश्वर वैश्यंत्री, भागवत वैश्यंत्री और रामसजीवन।

युगेश्वर – बब्बन धोबी का छोटा बेटा जो ग्रामीण अस्पृश्य भावनाओं का शिकार होकर भी मेधावी होने के कारण बड़े ओहदे का अधिकारी बनता है। पिता के पश्चात् चाचा और चाची के असीम प्यार व संरक्षण के कारण ही यह अच्छी पढ़ाई कर पाता है। इस अच्छी पढ़ाई का अच्छा परिणाम यह हुआ कि सचिवालय में ऑफिसर बन जाते हैं। परन्तु इसके साथ ही एक बुरी मानसिकता ने भी जन्म ले लिया। वह था – अपनी ही जाति को निम्न, अवर्ण या दलित मानना तथा स्वयं को सवर्ण ब्राह्मणवादी मानना। इसके लिए इन्होंने अपना नाम युगेश्वर वैश्यंत्री रख लिया था, जिससे अपनी जातिगत पहचान छुपायी जा सके। नौकरी मिलने के पश्चात् जब उनकी शादी के लिए रिश्ते आते तो अपनी जाति–बिरादरी में शादी करने से वो साफ मना कर देते; क्योंकि वो अपने से ऊपर की जाति में शादी करना चाहते थे। जब युगेश्वर की मामी उनसे शादी के लिए धोबी जाति के ऑफिसर की बेटी की चर्चा करती, तो युगेश्वर की बातें अपनी जाति से घृणा करने लगती। युगेश्वर मामी से कहता है – ''मामी, अब सच्ची बात बताऊँ आपसे। मैं धोबिन से शादी करना चाहता ही नहीं था। वे अफसर साहब दौड़ रहे थे मामा के पास! और उनकी बीबी भी आपको पोट रही थी, लेकिन क्या थी बीबी साहिबा! देखा था न आपने! ..... उनकी बाहों पर गोदना के निशान थे। गोदना से ही नाम लिखा था – सुदामा! अफसर की बीबी होने से क्या हो जायेगा? धोबिन कुछ भी हो जाए, धोबिन ही रहेगी! .....''[1]

जबकि मामी ओहदे के मामले में युगेश्वर से कम नहीं है। वह मंत्री की पत्नी है लेकिन उनमें अपने जातीय सम्मान का भाव यथावत् है। फलतः मामी क्रोधित होकर युगेश्वर को नसीहत भी देती है – ''तो भांजे! क्या आप धोबिन के जाये नहीं हैं? इतनी जल्दी भूल गए माँ–बाप को? आयं? यही पढ़ाई–लिखाई है आपकी? अफसरी मिल गई तो क्या जात भी बदल गई आपकी? गिरह बाँध लीजिए भांजे, आप कुछ भी हो जायेंगे, लोग आपको धोबी ही कहेंगे। मुँह पर सर–सर कहेंगे, पीछे–पीछे धोबिया कहेंगे।''[2] मामी और भांजे का यह वार्तालाप युगेश्वर की मानसिकता को और अधिक स्पष्ट कर देता है। इतना ही नहीं युगेश्वर मामा के हरिजन की राजनीति करने पर भी प्रश्न खड़ा करता है। जिस मामा का संरक्षण उन्हें प्राप्त हुआ था उन्हीं के विषय में युगेश्वर कहते हैं कि ''मामा हरिजनों की पॉलिटिक्स करते हैं। आप उन्हीं लोगों के बीच रहती हैं, इसलिए ऐसा कह रही हैं। मुझे कुछ लेना–देना नहीं हरिजन पॉलिटिक्स से!'' इस प्रकार हरिजन के लिए युगेश्वर के हृदय में कोई स्थान नहीं है।

उपन्यास में इस तरह के कई मार्मिक दृश्य हैं जहाँ युगेश्वर की कुत्सित भावना का दर्शन होता है। उसी में युगेश्वर की चाची का दृश्य है जब वह अपने ऑफिसर पुत्रवत् जाउत से मिलने जाती है। गाँव में जीवन जीने वाली चाची ने अपने वात्सल्य का पूरा भाव युगेश्वर पर लुटाया था। युगेश्वर के ऑफिसर बनने पर वह अत्यंत खुश है। उसे आशा है कि युगेश्वर मिलने पर उसे प्रणाम करेगा। पुत्र का प्यार प्रदान करेगा। इन्हीं आशाओं–आकाक्षांओं को मन में लिये वह युगेश्वर से मिलने पटना जाती है। गाँव के लोगों के लिए एकाएक शहर में आना एक चकाचौंध जैसा होता है। यह चाची के लिए भी था। वह शहर में आकर अपने द्वारा पालित–पोषित पुत्र को खोजती है। कभी यहाँ कभी वहाँ पता पूछती है। अंततः उन्हें अपने वात्सल्य–मूर्त्ति पुत्र का घर मिल जाता है। वहाँ पर खड़े व्यक्ति केवल सिंह को युगेश्वर का परिचित मान उनसे युगेश्वर के बारे में पूछती हैं और केवल सिंह के पूछने पर कहती हैं कि ''हाँ–हाँ, हमारे अपने जाउत हैं साहेब। एकदम खास अपने।''[3] केवल सिंह युगेश्वर का ड्राईवर था। वह चाची का समाचार युगेश्वर तक पहुँचाता है। युगेश्वर के पहचानने से इनकार करने पर चाची की दीनता व नैराश्य को देखकर केवल सिंह उन्हें अपने कमरे में ठहरने का आग्रह करता है। जब कमरे में केवल सिंह चाची को युगेश्वर की बातें बताते हैं कि उन्होंने कहा – ''कवन चाचा–चाची? हमारा केहू नहीं है चाचा–चाची। भगाओ, जाने कहाँ से लोग चले आते हैं धर्मशाला समझकर।''[4]

युगेश्वर की इन बातों को सुनकर चाची कहती है कि ''आज जुगेसर ने नहीं पहचाना अपनी चाची को। डलेबर साहब, आपके हाकिम को मैंने अपने हाथ से खाना खिलाया है। छोटे थे जुगेसर। उनके बाप रख गए थे मेरे यहाँ। अपना पेट काटकर अच्छा से अच्छा खाना खिलाते थे। मेरे अपने बेटे कभी दूध–दही चखते भी नहीं थे, परंतु भागवत और जुगेसर दुनू टेम दूध–दही जरूर खाते थे।''[5] विवेच्य उपन्यास में उपन्यासकार ने युगेश्वर के चरित्र को बखूबी उभारा है। युगेश्वर का बड़ा भाई भागवत वैश्यंत्री दलित शोषण में सबसे आगे है। जिस दलित समाज में पल–बढ़कर भागवत बड़ा हुआ, उसी समाज के आर्थिक व सामाजिक रूप से पिछड़ी जातियों का चहुँमुखी शोषण करते हैं। चूँकि दलित समाज के एक सबल व्यक्तित्व हैं भागवत बाबू। इस कारण उनके समाज के लोगों को उनपर विश्वास भी है। इसी विश्वास का गलत फायदा उठाकर भागवत अपने स्वार्थ की पूड़ी पका रहा है।

भागवत बाबू ठेकेदारी के कार्यों से आसपास के इलाके में सबसे धनी व शक्तिशाली बन गया है। परन्तु जब तक मनुष्य के वैचारिक भावनाओं का विकास नहीं हो पायेगा तब तक व्यक्तित्व समाज–कल्याण में पूर्णरूपेण सहायक सिद्ध नहीं हो सकता। वैयक्तिक या मानवीय भावनाओं के विकास का अभाव ही है कि भागवत अपने घर में काम करने वाली दुसाधन सुभगिया को कपड़े–पैसे का लालच देकर कार्यपालक अभियंता व अधीक्षण अभियंता की यौनपूर्ति का सामान बनाकर रख देते हैं। अपनी स्वार्थी वृत्ति में दूसरों के मनोभावनाओं को कुचल देने का कार्य भागवत कर रहे हैं। अपने दलित समाज के खवास टोली, दुसाध टोली व चमार टोली के जरूरतमंद लोगों से भागवत कभी अच्छे से बात नहीं करता। इनमें वही सामंती व राजपुतही संस्कार प्रवृत्त हो चुके थे जो पहले राजपूतों व जमींदारों में निचली जातियों के प्रति हुआ करती थी। उपन्यासकार के शब्दों में – ''बोली में ऐंठन और गालियाँ आ गई थी। एक दिन चमार टोली का एक मजदूर काम करने नहीं आया। भागवत बाबू ने बिलटा को देखा तो एकाएक गरम हो गए – 'रे बिलटा, तू साले काम पर आया नहीं कल? भागवत बाबू से उम्र में बड़ा बिलटा दाँत निपोरने लगा था – 'मालिक, मन जरा ढील था।' – साले, मन ढील था? कर्जा लेते समय मन कैसा था? दस जूते लगेंगे तो मन ढील नहीं होगा.....।[5]

अपने पिछड़े–दलितों के लिए उक्त कथन भागवत के सामंती भावों को प्रकट करने के लिए पर्याप्त है।

भागवत मंदिर और कॉलेज बनाकर समाज के लोगों के हृदय में अपनी छाप छोड़कर उसी विश्वास की आड़ में घिनौने कर्म करने में पारंगत था। जिस राजपूतों ने उनके बाप, माँ और बहन के साथ अत्याचार किया था, उन्हीं के यहाँ भागवत अपनी शादी करते हैं। राजपूतों की ढहती स्थिति का गलत फायदा उठाना तो एक दृष्टि में बदले की भावना से ग्रसित होना माना जा सकता है। परन्तु अपने दलित व शोषित लोगों की बहू–बेटियों की इज्जत लूटना किस बदले की भावना से सम्बन्धित माना जाय, यह एक चिंतन का विषय है। इसी कुत्सित भावनाओं का शिकार सुभगिया व बेचनी जैसी असहाय स्त्रियाँ होती रहीं। यह भागवत की प्रवृत्ति हमारे समाज के लिए एक रोग है। कथाकार भागवत के चरित्र के माध्यम से समाज में इस तरह के कुंठित व्यक्तियों की ओर इशारा करते हैं, जो सामाजिक संस्कारों को नष्ट करने पर तुले हुए हैं।

भागवत और युगेश्वर के साथ दिवाकर जी ने एक और चरित्र को उभारा है, जिसका नाम है रामसजीवन। रामसजीवन का चरित्र उदात्त, आदर्श और अनुकरणीय है।

रामसजीवन उसी गाँव के झमेली राम का बेटा है। रामसजीवन ने उन सभी समस्याओं को झेला है, जिसे भागवत और युगेश्वर ने देखा था। लेकिन चमार जाति का यह लड़का व्यक्तित्व के रूप में भागवत और युगेश्वर की तुलना में वरेण्य ठहरता है। उसे अपने घर–परिवार, माँ–बहन, भाई व पिता की चिन्ता हर समय रहती है। युगेश्वर से कम पढ़कर भी वह उससे अधिक आदरणीय प्रतीत होता है। रामसजीवन में नकारात्मक, कुत्सित विचारों का सर्वथा अभाव है। वह अपनी बहन बेचनी, भाई बिजुलिया व माँ के स्वास्थ्य की चिन्ता करता है। भागवत के द्वारा कॉलेज में नौकरी मिलने के अवसर मात्र इसलिए ठुकराता है कि वह भागवत के चरित्र से अवगत है और घूस देकर नौकरी की चाह नहीं रखता है। आर्थिक विपन्नता के बावजूद अपने मान–सम्मान के प्रति सजग है। जब गाँव की स्थिति दयनीय प्रतीत होती है। गाँव में लड़कियों–स्त्रियों की इज्जत का कोई सम्मान नहीं दिखाई पड़ता है, तो ऐसी स्थिति में वह माँ और बहन को लेकर शहर जाना चाहता है और ट्यूशन करके अपना भरण–पोषण करने के लिए तैयार हो जाता है।

युगेश्वर ने जिस चाची से मिलना तो दूर की बात, पहचानने से इनकार कर दिया, उसी चाची को रामसजीवन अपने घर में ससम्मान ले जाते हैं और रखते हैं। कुछ दिन के पश्चात् जब रामसजीवन की माँ के साथ जीरा चाची (युगेश्वर की चाची) भी घर जाने लगी तो जीरा चाची के रेलगाड़ी में बैठते ही दोनों माताओं में वार्ता प्रारंभ हो गई। गाड़ी में बैठी जीरा माय अपनी सखी–बहिना से हँसती हुई जो बोली उससे युगेश्वर के संकीर्ण व रामसजीवन के उदार चरित्र का सहजता से अवलोकन हो जाता है – ''कितना खोजते–ढूँढ़ते गई थी अपने जाउत के यहाँ। जाउत ने नहीं पहचाना। भगा दिया। इज्जत भी चली गई। कहावत है न 'पूत मांगे गइनी, भतार खो के अइनी'। और बिना ढूँढ़े ही बेटा मिल गया! है न, अजब बात बहिना? है न.....?''[6]

रामसजीवन भारतीय संस्कृति के आदर्श व्यक्ति का चरित्र है। उनका जीवन सराहनीय है। उनके जीवन से समाज को सीखने की जरूरत है कि किस प्रकार गरीबी व अभाव में भी अपनी संस्कृति व संस्कार को अक्षुण्ण रख सकते हैं! कैसे कम में भी खुश रहा जा सकता है और समस्त पारिवारिक दायित्वों का हँसते हुए निर्वाह किया जा सकता है?

निष्कर्षात्मक विवेचन

उपन्यासकार रामधारी सिंह दिवाकर ग्रामीण जीवन के अनूठे उपन्यासकार हैं। इनकी पैनी दृष्टि सामाजिक संवेदना के किसी कोने में छिपे स्पंदन को भी आसानी से पकड़ पाने में समर्थ है। इनकी लेखनी सूक्ष्मता का अवलोकन करने के साथ ही समाज के कटु सत्यों को भी साहस के साथ कहने की अपूर्व क्षमता रखती है। समकालीन साहित्यकार जहाँ दलित विमर्श के माध्यम से समाज के ऊपरी हिस्सों पर दीख रहे जाति भेद, वर्ग भेद, सामंती, जमींदारी शोषक–शोषित व परम्परागत ब्राह्मणवाद के खिलाफ आवाज उठा रहे थे। किसी दलित लेखकों की नजरें वहाँ जाने में असमर्थ थी, जहाँ शोषित के अभ्यंतर शोषित चीखें लगा रहा था; लेकिन उन आवाजों को सुनने की फुर्सत ही किसी को कहाँ थी! यदि कोई सुन भी रहे थे तो उन पर कुछ लिख पाने की हिम्मत नहीं जुटा रहे थे। ऐसे में दिवाकर की लेखनी ने दलित विमर्श को एक नया आयाम प्रदान किया।

विवेच्य उपन्यास के माध्यम से उपन्यासकार समाज के निम्न वर्ग, जिसे आज दलित नाम दिया गया है, में आए परिवर्तन को रेखांकित करते हुए पाठक के सामने स्वयंमेव एक प्रश्न खड़ा कर देते हैं कि आरक्षण व समाज के लिए अन्यान्य कल्याणकारी योजनाओं से जो परिवर्तन समाज में हुआ है, यह समाज के लिए गुणात्मक रूप से कितना लाभकारी सिद्ध हुआ है। उपर्युक्त औपन्यासिक तथ्यों से यह स्पष्ट है कि दलित आन्दोलन सामंती विचारों व जीवन–शैली के विरूद्ध छेड़ा गया था; आज सत्ता व शक्ति पाकर कुछ दलित पुनः उसी सामंती–ब्राह्मणवादी विचारों से प्रेरित होते जा रहे हैं; साथ ही अपने ही वर्ग के लोगों के शोषण में प्रवृत्त होते जा रहे हैं। यह समाज के लिए घातक है। यह समाज का उत्थान तो दूर, पुरानी दयनीयता के स्तर से भी अधिक गहराई में समाज को ढकेलने को उद्धत है। रामसजीवन के माध्यम से उपन्यासकार आदर्श की मौन गाथा तो कहते हैं, साथ ही युगेश्वर और भागवत के माध्यम से समाज की इन विकृतियों पर भी ऊँगली उठाने में कोई कमी नहीं छोड़ते हैं। ग्रामीण समाज में हो रहे परिवर्तन और दलित–चेतना को नए परिप्रेक्ष्य में चित्रित करने में उपन्यासकार ने पूर्ण सफलता पायी है। दिवाकर जी ने आंचलिक भाषा के चुहचुहाते शब्द व ग्राम्य संवेदनाओं–स्पंदनों को पाठक के हृदय तक पहुँचाने वाली ललित वाक्यावलियों से कथा को पठनीय बनाने की पूरी कोशिश की है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *आग पानी आकाश (उपन्यास), लेखक–रामधारी सिंह दिवाकर, पृष्ठ–50*
2. *आग पानी आकाश (उपन्यास), लेखक–रामधारी सिंह दिवाकर, पृष्ठ–50*
3. *आग पानी आकाश (उपन्यास), लेखक–रामधारी सिंह दिवाकर, पृष्ठ–122*
4. *आग पानी आकाश (उपन्यास), लेखक–रामधारी सिंह दिवाकर, पृष्ठ–124*
5. *आग पानी आकाश (उपन्यास), लेखक–रामधारी सिंह दिवाकर, पृष्ठ–124*
6. *आग पानी आकाश (उपन्यास), लेखक–रामधारी सिंह दिवाकर, पृष्ठ–130*